भारत में काश्मीर समस्या और पाकिस्तान

राहुल कुमार

एम० ए०, पीएच०डी०

विश्वविद्यालय इतिहास विभाग,

एल० एन० मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा।

1947 में काश्मीर का भारत के साथ विलय किसी फौजी कार्यवाही का परिणाम नहीं था, बल्कि यह विलय काश्मीर पर अक्टूबर 1947 में हुये पाकिस्तानी घुसपैठी हमले का नतीजा था। आजादी के पश्चात् काश्मीर नरेश हरी सिंह ने भारत एवं पाकिस्तान के साथ 'यथास्थिति' (ठहराव) संधि' कर ली थी, जिसका अर्थ यह है कि अन्तिम फैसला होने तक मौजूदा व्यवस्था चलती रहेगी। इस सम्बन्ध में भारत की ओर से उन्हें कोई सकारात्मक उत्तर नहीं मिला, क्योंकि महाराजा के प्रस्ताव तथा उसके सम्भावित परिणामों का अध्ययन करने के लिये समय का अभाव था।[1]

उपर्युक्त संधि के बावजूद पाकिस्तान बनने के केवल दो महीने आठ दिन पश्चात् ही सीमा–प्रांत के पॉच हजार से अधिक पठान कवाइलियों को पाकिस्तान के नियमित सैनिकों के संरक्षण में सितम्बर 1947 में काश्मीर की आर्थिक नाकेबन्दी कर दी थी तथा सैनिक कार्यवाही द्वारा 22 अक्टूबर 1947 को पहले मुजफ्फराबाद पर कब्जा किया और 27 अक्टूबर को बारामूला हथिया लिया। पाकिस्तानी हमले की बर्बरता का अनुमान लगाने के लिये यह जानना काफी है कि बारामूला 14000 जनसंख्या वाला मुस्लिम–बहुल नगर था, जिसमें हमले और लूट–पाट की कहानी बताने के लिये केवल 3000 लोग जिन्दा बचे थे।

इस हमले के कारण महाराजा ने 24 अक्टूबर को भारत से सैनिक सहायता की प्रार्थना की। भारत की ओर से कहा गया कि भारतीय सेना केवल उसी भाग में भेजी जा सकती है, जो भारत का हिस्सा है। इसलिए सैन्य सहायता लेने के लिए पहले काश्मीर का भारत में विलय करना होगा। महाराजा श्रीनगर छोड़कर जम्मू आ चुके थे और वहीं से विलय के दस्तावेज पर हस्ताक्षर किया। इस मामले में महाराजा अकेले नहीं थे, तब शेख अब्दुल्ला स्वयं दिल्ली में मौजूद थे और उन्होने विलय के साथ सैन्य सहायता के प्रस्ताव का अनुमोदन किया था। इससे भी महत्वपूर्ण यह है कि पाकिस्तानी हमला 22 अक्टूबर को आरम्भ हुआ, जबकि पहली भारतीय सैन्य सहायता अर्थात 330 जवानों की टुकडी 27 अक्टूबर को श्रीनगर पहुॅची। इन पॉच दिनों में पाकिस्तानी घुसपैठियों का प्रतिरोध किसने किया– खासकर तब,जब महाराजा श्रीनगर छोड़कर जा चुके थे– स्पष्ट है कि समस्त राजनैतिक कार्यकर्ता के साथ ही साथ काश्मीरी जनता भी काश्मीरी सैनिकों के साथ पाकिस्तानी हमले के विरूद्ध खड़ी हो गयी थी और भारतीय सेना के पहुॅचने के पहले उन्होंने घुसपैठियों का मुकाबला किया तथा श्रीनगर को पाक के कब्जे में जाने से बचाया।[2]

अग्रेजों की कुटिल चालों से पाकिस्तान का निर्माण तो हो गया, लेकिन वहॉ के शासकों को राष्ट्र को चलाने का सलीका नहीं आया। नतीजा यह हुआ कि पहले पाकिस्तानी शासक अपने यहॉ के मुसलमानों को बरगलाकर भारत से उलझते रहे और फिर पूर्वी पाकिस्तान की जनता पर अत्याचार करने लगे। फलस्वरूप 1971 में बॉग्लादेश के रूप में पाकिस्तान का विभाजन हो गया। इस विभाजन से भी कोई सबक न लेते हुये पाक सरकार काश्मीर को हड़पने की नीति पर चलती रही और भारत के साथ ही साथ अपने लिये भी संकट पैदा करती रही। आज वही संकट पाक के अस्तित्व के लिये एक बड़ा खतरा बन गया है। काश्मीर मुद्दे पर भारत और पाकिस्तान के बीच विवाद अब भी जारी है, जहॉ भारत पाकिस्तान के कब्जे वाले काश्मीर को वापस पाने के लिए कोई प्रयास नहीं कर रहा है, वहीं पाकिस्तान काश्मीर घाटी को जोर–जबरदस्ती से हासिल करने के लिए हर प्रकार की चालें चल रहा है। बीच में उसने पंजाब में आतंकवाद को बढ़ावा देकर भारत में

खालिस्तान बनाने के लिए अपनी सारी ताकत झोंक दी। पंजाब में असफलता मिलने पर उसने अपना सारा ध्यान काश्मीर को अशान्त करने में लगा दिया। पाकिस्तान आज भी काश्मीर में एक अघोषित युद्ध छेड़े हुए है। इस अघोषित युद्ध के लिए उसने अपने यहॉ के जेहादी तत्वों को जिस तरह संरक्षण दिया, उसके परिणाम स्वरुप उसके अनेक हिस्सों और विशेष रुप से अफगानिस्तान से लगे इलाके में आतंकवादियों की तूती बोलने लगी है। इस इलाके में पाकिस्तान की सत्ता का कोई वजूद नहीं। यहॉ कबाइली गुटों के कानून चलते हैं तथा वजीरिस्तान, बलूचिस्तान और स्वात प्रान्तों से पाकिस्तानी झण्डा उतार दिया गया है तथा सेना को भी मुँहतोड़ जबाब दे रहे हैं। पाकिस्तान के शासकों ने लोकतन्त्र की जड़ों को मजबूत करने के स्थान पर सेना पर जरुरत से ज्यादा भरोसा किया, उसका परिणाम यह है कि वहॉ चुनी हुई सरकारों के स्थान पर सैन्य शासकों का दबदबा रहा। वहॉ बिजली की मीटर रीडिंग फौजी जवान करता है तभी काम होता है। वहॉ कोर कमाण्डर को करोड़ कमाण्डर कहा जाता है। आई0एस0आई0 काबू से बाहर हो चुकी है वह केवल सेनाध्यक्ष की ही बात सुनती है। पाकिस्तान में सालों तक सेना का राज रहा है, इस कारण वहॉ सैनिक शासन की जड़ें बहुत गहरी हो चुकी हैं। 1988 के दक्षेस सम्मेलन में शिरकत करने के बाद प्रधानमंत्री राजीवगांधी जब इस्लामाबाद से दिल्ली लौट रहे थे तब तत्कालीन प्रधानमंत्री बेनजीर भुट्टो ने अपने घर पर लंच के दौरान साफ–साफ कहा था कि मैं प्रधान मंत्री तो हूँ, लेकिन सेना और आई0एस0आई0 हमारी बात नहीं सुनती। बेनजीर की यह बात उस समय सच साबित हुई, जब नवाज शरीफ (पाक प्रधानमंत्री)की बगैर जानकारी के तत्कालीन सेनाध्यक्ष परवेज मुसर्रफ ने पाकिस्तानी सेना कारगिल में भारतीय सीमा के अन्दर भेज दिया। जब नवाज शरीफ, अटल बिहारी बाजपेयी का लाहौर में स्वागत कर रहे थे, तब जनरल मुसर्रफ इस्लामाबाद में बैठकर कारगिल हड़पने की व्यूह–रचना कर रहे थे।

जनरल मुसर्रफ ने नवाज शरीफ को सैनिक तानाशाही की बदौलत बर्खास्त करके शासन–सूत्र अपने हाथ में लेकर अमेरिकी सर परस्ती के नाते मनमानी करते गये। जार्ज बुश की मुसर्रफ पर ज्यादा विश्वास कि वह आतंकवाद को समाप्त करके तालिबानियों का सफाया करेंगे, लेकिन परवेज मुसर्रफ ने आतंकवाद से लड़ने, बेहतर शासन प्रदान करने और लोकतंत्र को मजबूत बनाने की आड़ में देश और दुनियॉ की ऑखों में धूल झोंकने के अलावा और कुछ नहीं किया। मजहबी दल इससे भी बहुत अधिक बुरा काम कर रहे हैं, वे मुल्क में कट्टरवाद को फैला रहे हैं। इसके कारण पाकिस्तानी युवकों का एक हिस्सा अपनी सोच में प्रदूषित हो चुका है। अमेरिका द्वारा कट्टरवाद को कुचलने के लिए डाले जा रहे दबाव मात्र से ही पाक शासक परेशान नहीं है उनकी अपनी जिन्दगी के लिये भी खतरा है। 07 नवम्बर 2010 को बराक ओबामा भारत की धरती पर कदम रखते ही पाकिस्तान का जिक्र जब किया तो खूब किया। उन्होंने पाकिस्तान को बेहद महत्वपूर्ण सहयोगी बताते हुये कहा कि पाक की तरक्की सबसे ज्यादा भारत के लिए जरूरी है। यदि पाकिस्तान अस्थिर रहता है तो उसका सबसे ज्यादा नुकसान भारत को ही उठाना पडेगा। जाहिर है पाकिस्तान को सीधे–सीधे आतंक का केन्द्र कहने में उन्हांने सावधानी बरती, जिस तरह उन्होंने पाकिस्तान की तरक्की को भारत के लिये जरूरी बताया, उससे इतना जरूर साफ हो गया कि वह भारत से ज्यादा अमेरिका के लिये महत्वपूर्ण है। इसलिये ओबामा ने पाकिस्तान को भी आतंक से उतना ही पीड़ित बताया जितना और देशों को। ओबामा ने कहा कि पाकिस्तान में कुछ कट्टरपंथी लोग हैं जिन्होंने माहौल खराब कर रखा है और इसका खामियाजा पाकिस्तान को भी भुगतना पड़ रहा है। वह स्वयं भी कट्टरपंथियों से लड़ रहा है। वहॉ अस्थिरता, कट्टरता और आतंकवाद दुनियॉ के लिये कैंसर के समान है। ऐसा इसलिए है क्योंकि पाकिस्तान अभी उतनी तरक्की नहीं कर पाया है, जितनी उसे करनी चाहिये थी। ठीक इसी तरह से बयान ओबामा के पूर्ववर्ती राष्ट्रपति जार्जबुश ने भी पाकिस्तान के लिये कहा था, लेकिन विश्व के समस्त राष्ट्र पाकिस्तानी शासकों की चालों को अच्छी तरह से जानते और समझते भी हैं जिसके लिये वह स्वयं जिम्मेदार है। इन्हीं समस्त कारणों पर हमें प्रकाश डालना है।

''दशकों से सुलगती आग''–

भारत सरकार काश्मीर की समस्या को लेकर असमंजस में है। क्या इस समस्या का समाधान जम्मू–काश्मीर राज्य को अधिक स्वायत्तता देने में है? क्या वहॉ सेना को कानून द्वारा जो विशेष अधिकार प्राप्त है उसे समाप्त करना चाहिये? क्या वहॉ सेना की उपस्थिति में कमी करना उचित होगा? क्या वहॉ हिंसा में लिप्त रहे अलगाववादियों को जेलो से रिहा करना चाहिये?

काश्मीर घाटी में आज 'आजादी का नारा जोर शोर से उछाला जा रहा है। काश्मीर आजाद होना चाहता है। किससे? स्पष्ट है कि भारत से। क्या वह आजाद होकर एक सम्प्रभु राष्ट्र बनना चाहता है? वहॉ इस समय जो वातावरण दिख रहा है उससे लगता है कि उसका झुकाव पाकिस्तान की ओर है, क्योंकि वहॉ पाकिस्तानी झण्डा फहराकर पाकिस्तान जिन्दाबाद के नारे लगाये जा रहे हैं। ऐसा क्यों हो रहा है। वह जानने के लिये हमें इतिहास के पन्ने पलटते हुये छः दशक पीछे जाना होगा, क्योंकि वहॉ ऐसा अनेकों बार हुआ है। हम लगभग सात दशक पीछे जॉय। सारे देश में आजादी की लड़ाई लड़ी जा रही थी। देश के विभिन्न भागों में स्थित देशी रियासतों में लोग राजाओं और नबाबों के शासन तंत्र से मुक्त हो वहॉ जनतांत्रिक अधिकारों को प्राप्त करने के लिये संघर्ष कर रहे थे।

काश्मीर में मुस्लिमों का बहुमत था लेकिन शासक हिन्दू था। इस हिन्दू शासक से मुक्ति दिलाने हेतु शेख अब्दुल्ला ने वहॉ 1932 में मुस्लिम कॉन्फ्रेन्स की स्थापना की थी बाद में इसका नाम बदल कर ''नेशनल–कान्फ्रेन्स'' कर दिया गया। इस समय तक मुहम्मद अली जिन्ना जिन्दा थे जो अखण्ड भारत में मुसलमानों के सर्वोच्च नेता बन चुके थे और शेख अब्दुल्ला जिन्ना का नेतृत्व स्वीकार करने को तैयार नहीं थे। 1947 में भारत का विभाजन होने के पश्चात देश के अनेक राजा, महाराजा और नबाब अपनी सहूलियत एवं सरदार पटेल की दूरदर्शी क्रिया–कलापों से भारतीय संघ में आ गये थे। भोपाल,जूनागढ हल्की सी सैनिक कार्यवाही के पश्चात हैदराबाद जैसी मुस्लिम शासकों द्वारा शासित रियासतें भारत में शामिल हो गई थी किन्तु जम्मू–काश्मीर राज्य का विलय भारतीय संघ में उस प्रकार नहीं हुआ जैसा देश के अन्य राज्यों का हुआ था। जम्मू–काश्मीर के लिये पृथक व्यवस्था की गयी। शेख अब्दुल्ला ने राज्य के प्रधानमंत्री के रूप में शपथ–ग्रहण की। वहॉ का संवैधानिक प्रमुख–राज्यपाल या राजप्रमुख केन्द्र द्वारा नियुक्त न होकर राज्य की विधानसभा द्वारा नियुक्त हुआ और सदरे–रियासत' कहलाया। राज्य के लिये अपना अलग संविधान बनाने की स्वीकृति दे दी गयी उसका अपना अलग ध्वज होना भी स्वीकार कर लिया गया। शेख अब्दुल्ला ने वह मान लिया कि केन्द्र के पास विदेश नीति, प्रतिरक्षा और संचार माध्यमों के अतिरिक्त और कोई अधिकार नहीं रहेगा। शेष सभी अधिकार राज्य के पास रहेंगे। किन्तु चार–पॉच वर्ष में ही गुप्तचर विभाग की ओर से केन्द्र सरकार को सूचनायें मिलने लगी कि शेख अब्दुल्ला पाकिस्तान की सरकार से जोड़–तोड़ करने में लगे हुये हैं। वह अमेरिका से भी सम्पर्क साध रहे हैं और प्रयास कर रहे हैं कि ये देश स्वतंत्र काश्मीर की उनकी परिकल्पना को साकार करने में सहायता दें। 10 अप्रैल 1952 को एक जनसभा को सम्बोधित करते हुए शेख अब्दुल्ला ने कहा कि जम्मू–काश्मीर के भारत में पूर्ण विलय की बात वास्तविकता से दूर है, बचकानी है और पागलपन से भरी है। जम्मू–काश्मीर को भारत में पूर्ण विलय के लिये जनसंघ के अध्यक्ष डॉ0 श्यामा प्रसाद मुखर्जी ने दिसम्बर 1952 में एक आन्दोलन प्रारम्भ किया। उन्हें शेख अब्दुल्ला ने बन्दी बना लिया। 23 जून 1952 को हिरासत में उनकी मृत्यु हो गयी। इस समय तक पं0 नेहरू का शेख अब्दुल्ला से पूरी तरह मोहभंग हो चुका था। 08 अगस्त 1953 को सदरे–रियासत डॉ कर्ण सिंह के माध्यम से शेख अब्दुल्ला की सरकार बर्खास्त कर दी गयी और शेख अब्दुल्ला को बंदी बना लिया गया। उनके स्थान पर जम्मू–काश्मीर के उप–प्रधानमंत्री बख्शी गुलाम मुहम्मद की नियुक्ति कर दी गयी। लेकिन पं0 नेहरू की नीतियों से 'आजाद काश्मीर' की स्थापना करवा कर जम्मू–काश्मीर में आग लगवा दी गयी। काश्मीर घाटी का मुस्लिम बहुमत और जम्मू क्षेत्र की हिन्दू भावनाओं का आज पूरी तरह ध्रुवीकरण हो गया है। पृथकता के बीज छः दशक पहले बो दिये गये थे आज उसकी फसल लहलहा रही है।

यहॉ यह संशोधन अत्यावष्यक है कि जब पाकिस्तानी कवाइलियों के वेश में 22 अक्टूबर 1947 को काश्मीर पर आक्रमण किया था तो महाराजा भी नगर छोड़कर जम्मू जा चुके थे और वहीं से उन्होंने विलय के दस्तावेज पर हस्ताक्षर किया था। इस मामले में महाराजा अकेले नहीं थे। 24 अक्टूबर को जब महाराजा के दूत ने सम्बन्धित दस्तावेज भारत सरकार को सौंपे तब शेख अब्दुल्ला स्वयं दिल्ली में मौजूद थे और उन्होंने विलय के साथ सैन्य सहायता के प्रस्ताव का अनुमोदन किया था। यह बड़ा विचित्र तर्क है कि 1947 में तो पाकिस्तानी कब्जे से बचने के लिये भारतीय सेना और भारतीय संसाधनों का उपयोग किया जाय और 2008 में लोकतंत्र के तथाकथित लेखक दुहाई देते हुये यह सलाह दें कि काश्मीर को अलग होने देना चाहिये, क्योंकि वह हमारे साथ नहीं रहना चाहता। 1947 में राज्यों के पास केवल दो विकल्प थे–भारत या पाकिस्तान के साथ विलय। सभी राज्यों ने अपना–अपना फैसला कर लिया। अब 2008 में कश्मीर को एक नया विकल्प देने की वकालत की जा रही है तो फिर यह विकल्प रवान अब्दुल गफ्फार खॉ को क्यों नहीं दिया गया ? वह पाकिस्तान बनाये जाने के धुर विरोधी थे और पश्चिमोत्तर प्रान्त की जनता ने बॅटवारे के विरुद्ध वोट दिया था लेकिन तीसरे विकल्प के मौजूद न होने के कारण पश्चिमोत्तर प्रान्त को अपनी इच्छा के विरुद्ध पाकिस्तान का हिस्सा बनना पड़ा और सीमान्त गॉधी के शब्दों में उन्हें भेड़ियों के सामने डाल दिया गया। उन्होंने पाकिस्तानी जेलों में उससे ज्यादा समय बिताया जितना स्वतंत्रता आन्दोलन के दौरान अंग्रेजों की जेलों में काटा था। पाकिस्तान अपने बड़े भू–भाग (बॉग्लादेश) को खोने के बाद भी एक देश और एक विचार के रूप में जिन्दा रह सकता है क्योंकि उसकी पैदाइश का आधार एक अलगाववादी विचार धारा थी।[5]

पाकिस्तानी सेना का लगभग हर अधिकारी भारत से दोस्ती का विरोध करता है। उनका मानना है कि अगर भारत से दोस्ती हो गयी तो सेना की भूमिका कमजोर हो जायेगी और यदि रक्षा–बजट कम हो जायेगा तो सैनिक अफसरों को मौज–मस्ती के लिये पैसा नहीं मिलेगा। भारत से शत्रुता के नाम पर पाकिस्तानी सेना और आई0एस0आई हजारों करोड़ रूपये सरकार से लेती है। आई0एस0आई0 अपने आप में एक माफिया गिरोह बन चुकी है जो आतंकवादियों को सहायता देने के अलावा अपहरण और नशीली दवाओं की तस्करी में भी लिप्त है। वह कठमुल्लापन को बढ़ावा देने का भी काम करती है। उसके हर अफसर की इस्लामाबाद, लाहौर और करॉची में रिटायरमेन्ट के बाद अलीशान कोठियॉ बन जाती हैं। आई0एस0आई0 का मुख्य उद्देश्य अफगानिस्तान और भारत में आतंकी हमले कराना, ट्रेनिंग कैम्प (आतंकी कार्य सिखाने हेतु) लगवाना तथा नेपाल व बॉग्लादेश के जरिये भारत में आतंकियों की घुसपैठ कराना है इसे शुरूवात में 'रा' की नकल पर जनरल जिया–उल–हक ने बनाया था, लेकिन धीरे–धीरे वह बेलगाम हो गयी।

काश्मीर विवाद के समाधान का रास्ता पकिस्तान से होकर जाता है। तात्पर्य यह है कि काश्मीर पाकिस्तान के वजूद की मजबूरी बन चुका है। अगर काश्मीर मुद्दा न रहे तो पाकिस्तान विखर जायेगा। सियासत के खेल में प्यादे की भूमिका निभा रहे काश्मीर घाटी के 35 लाख लोगों की कोई गलती नहीं है। तुष्टीकरण के डोज और अनायास ही फोकस में रक्खे जाने के कारण वे सामान्य भारतीय नागरिक हो ही नहीं सके। हमारी नीतियों ने काश्मीर नागरिकों को काश्मीर की सीमाओं तक ही सीमित कर दिया। अनुच्छेद 370 की सीमाओं में ही रह जाने से अपनी आभासी दुनियॉ में वे राष्ट्रीय मानसिकता विकसित ही नहीं कर सके। वे उस बच्चे के समान हो गये जिसे अच्छी शिक्षा नहीं दी जा सकी है। उन्हें वह बताया जाना था कि तुम्हारी हद सिर्फ घाटी के छोटे समाज तक ही नहीं है। जरूरी था कि सस्ता सरकारी राशन खाने के बजाय बेरोजगार, कारोबार की तलाश में शेष भारत में जॉय। दुर्भाग्य से राजनीति के राष्ट्रीय धुरन्धरों की ऐसी सोच नहीं है। वे सरकार और सत्ता से आगे कहॉ सोच पाते हैं। यह समझना जरूरी था कि काश्मीरी पंड़ितों में अगर काश्मीरियत के साथ राष्ट्रीयता की सोच जिन्दा है तो यह सोच वहॉ के मुसलमानों में क्यों नहीं है। साठ वर्षों का तुष्टीकरण हमें इस मुकाम तक ले आया है कि आज जम्मू के राष्ट्रीय झण्डे के बरक्स घाटी में पाकिस्तानी झण्डा लहराया जा रहा है। इसलिए आगे का रास्ता अब तुष्टीकरण का नहीं है। समस्या के अपने आप समाधान के इन्तजार में बैठे नेताओं का मुकाबला मजहवी उन्माद और आतंकवाद से हो गया है। विभाजन कारी राजनीति में तुष्टीकरण

का डोज बढ़ाने के अलावा समाधान का कोई रास्ता है ही नहीं। इसलिए वे बार–बार वार्ताओं की ही रट लगाए रहते हैं जबकि इस समस्या का समाधान अब राजनीति की परम्परागत सीमाओं से बाहर चला गया है। दुनियॉ में पाकिस्तान एक गैर जिम्मेदार देश के रूप में जाना जाता है। उसकी स्थापना की अस्वाभाविकता उसे एक राष्ट्र नहीं होने देगी। हमारी समस्या कश्मीर नहीं, बल्कि पाकिस्तान है। एक विवेकपूर्ण काश्मीर कभी भी पाकिस्तान के साथ नहीं जाना चाहेगा। शेख अब्दुल्ला काश्मीर को पंजाबी कालोनी बनने से बचाने के लिए ही भारत के साथ आए क्योंकि वह जानते थे कि पाकिस्तान में शामिल होने के बाद तो आजादी का आन्दोलन असम्भव है जबकि भारत में आगे चलकर यह सम्भव हो जायेगा। काश्मीर का तुष्टीकरण करके हमने काश्मीर की सद्भावनापूर्ण परम्पराओं को भी समाप्त कर दिया है। हमने अलगाववाद के लिए प्रीमियम देना शुरू कर दिया है। तुष्टीकरण का अन्त नहीं होता। तुष्टीकरण की राजनीति का अर्थ ही यही है कि कभी सन्तुष्ट न हो। जब महात्मा गॉधी ने जिन्ना से कहा कि अपनी मॉगे बताइए हम स्वीकार करेंगे, तो जिन्ना का जबाब था, हमारी लेटेस्ट मॉगे ये हैं, पर ये लास्ट नहीं हैं।'' कुछ इसी तरह काश्मीरियों की हर मॉग लेटेस्ट होती है, लास्ट नहीं। जब सरकारें तुष्टीकरण में अंधी हो जाती हैं तो जनता को आगे आना पड़ता है। चूॅकि कांग्रेस और बुद्विजीवी वर्ग के हिन्दू यह प्रश्न नहीं पूछते, इसलिए काश्मीरी मुसलमान शेष भारत पर धौंस जमाना अपना अधिकार मानते हैं। वस्तुतः इसमें इस्लामी अहंकारियों से अधिक घातक भूमिका सेकुलर बामपंथी हिन्दुओं की है।[6]

कश्मीर घाटी में पाकिस्तानी दखल इस कदर बढ़ गयी है कि सुरक्षा बलों को निशाना बना रहें पत्थरवाजों की पीठ पर आई0एस0आई0 का हाथ, घटनाओं के अटूट क्रम में यह ऐसा क्रम है जो वर्षो से यह भी स्पष्ट हो रहा है कि कि कौन इसके पीछे है और जो इनके पीछे है वह ऐसी होशियारी खेलने में सिद्धहस्त है कि वह बार–बार करता जा रहा है और फिर प्रायः हाथ झाड़कर आतंकवाद की भर्त्सना करने वालों की कतार में खड़ा हो जाता है और स्वयं को दूध का धुला हुआ सिद्ध करने की चेष्टा करता है, अथवा जम्मू–काश्मीर में पृथकतावादी हिंसा को ''आजादी की लड़ाई'' कहकर जेहाद के नाम पर खुलेआम सहायता समर्थन भी देता है। भारत–सरकार द्वारा बार–बार आरोप दोहराये जाते हैं, विश्व भर के लोगों को स्थिति से अवगत कराया जाता है तथा स्पष्ट प्रमाण तक दिया जाता है लेकिन आतंकवाद की भर्त्सना तक पहुॅचकर अन्ततः सभी शान्त पड़ जाते हैं। अमेरिका अपने हितों को सर्वोपरि रखते हुये पाकिस्तान को आतंकवाद के विरूद्ध खेमे में उसके साथ खड़े होने का दम भरते हुये उसकी मुखर भर्त्सना से संकोच करता है। पाकिस्तान अमेरिका की इस विवशता को जानता है इसलिये भारत के विरूद्ध अपने आतंकी अभियान को जारी रखते हुये स्थिति का लाभ उठाता है क्योंकि अमेरिका नहीं चाहता है कि पाकिस्तान के विरूद्ध किसी कार्यवाही से उसकी रणनीति को धक्का पहुॅचें।

सन्दर्भः–

[1] गृह विभाग के सचिव वीपी मेनन– इण्टिग्रेसन आफ स्टेट्स, प्रकाशन–भारत सरकार 1947

[2] प्रो0 मोहर चक्रवर्ती –भारत व पाकिस्तान– सुलह व कलह के क्षितिज के पीछे, पृष्ठ 82, कोलकाता प्रकाशन, 2003

[3] वही ––––––पृष्ठ 85

[4] प्रो0 कलीम बहादुर – पाकिस्तान भारत का पड़ोसी (बहुत नजदीक, पर बेहद दूर) पृष्ठ 7, नूर पब्लिकेशन, मुरादाबाद

[5] जे0एम0 श्रीवास्तव – राष्ट्रीय सुरक्षा, पृष्ठ 27–28 चन्द्रप्रकाश एण्ड कम्पनी, हापुड़, 1986

[6] डॉ0 डी0एन0 सिंह– राष्ट्रीय सुरक्षा की समस्यायें, पृष्ठ 34–35, लोकप्रिय प्रकाशन, मेरठ, 2003